मुस्लिम पर्सनल लॉ

मसायल और अहकाम

(23rd April to 7th May 2017)

पर्सनल लॉ बेदारी मुहिम

जमाअते-इस्लामी हिन्द

JAMAAT-E-ISLAMI HIND
D-317,DAWAT NAGAR,ABUL FAZAL ENCLAVE,
JAMIA NAGAR,NEW DELHI-110025
Ph: 011-26951409,26941401,26948341
Fax: 011-26950975
E-mail : markazjih@gmail.com
Website : jamaateislamihind.org

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

विषय सूची

क्या	कहाँ
मुस्लिम पर्सनल लॉ मौजूदा सूरते हाल	3
मुस्लिम पर्सनल लॉ क्या है?	3
इस्लाम के .ख़ानदानी क़ानूनों पर एतिराज़ात	5
निकाह का इस्लामी तसव्वुर	6
इस्लाम ने निकाह को आसान बनाया है	8
निकाह की .ख़र्चीली रस्में	10
एक से ज़्यादा बीवियाँ (बहुविवाह)	11
.ख़ानदानी निज़ाम में मर्द और औरत के काम करने का दायरा	12
मियाँ-बीवी के हक़ और फ़र्ज़	15
शौहर-बीवी के बीच तालमेल न बनने का हल	17
इख़्तिलाफ़ात दूर करने में .ख़ानदानवालों का तआवुन	18
तलाक़ की क़िस्में	20
तलाक़ देने के तरीक़े	21
तीन तलाक़ का मसला	22
मंसूबाबन्द हलाला हराम है	23
.ख़ुला, मुबारात और अलैहदगी	24
तफ़वीज़े-तलाक़ (तलाक़ का लागू करना)	25
इद्दत की सूरतें और अहकाम	25
तलाक़ पाई हुई औरत की कफ़ालत (भरण-पोषण) कैसे हो?	26
हक़्क़े-हिज़ानित (हक़्क़े-परवरिश)	28
इस्लाम का क़ानूने-विरासत	28
विरासत की बहुत-सी सूरतों में औरत का हिस्सा कम होने की वजह	30
यतीम पोतों-पोतियों की कफ़ालत कैसे हो?	32
लेपालक का मसला	34
मुस्लिम पर्सनल लॉ पर अमल ज़रूरी क्यों?	35
मौजूदा हालात की नज़ाकत और हमारी ज़िम्मेदारियाँ	37

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

मुस्लिम पर्सनल लॉ- मौजूदा सूरते-हाल

हमारे देश में आज़ादी के बाद ही से मुसलमानों के .ख़ानदानी क़ानूनों (Muslim Personal Law) के ख़िलाफ़ बराबर आवाज़ें उठती रही हैं और उन क़ानूनों को .ख़त्म करने की साज़िशें की जाती रही हैं, अलबत्ता हालिया दिनों में इस मामले में बहुत तेज़ी आई है और सरकार के हौसले खुल कर सामने आ गए हैं। एक ग़ैर-मुस्लिम जोड़े के बारे में एक केस की सुनवाई के दौरान सुप्रीम कोर्ट ने तीन तलाक़ और बहुविवाह (एक से अधिक पत्नी रखने) के ख़िलाफ़ जो अन्दाज़ अपनाया है लॉ कमीशन ने जिस तरह सवालनामे जारी किए हैं और .ख़ुद केन्द्र सरकार का जो पक्ष सामने आया है, उन्होंने मुस्लिम संगठनों, आलिमों, बुद्धिजीवियों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और संजीदा लोगों में बजा तौर पर तशवीश और चिन्ता की लहर दौड़ा दी है। ज़रूरत है कि इसका नोटिस लिया जाए, इस मामले में मुसलमानों में जागरूकता लाई जाए, उनके अन्दर इस्लाम के .ख़ानदानी क़ानूनों पर अमल की भावना पैदा की जाए, वतनी भाइयों को भी समझाया जाए कि मुसलमानों के .ख़ानदानी क़ानून क़ुरआन के आदेशों का हिस्सा और न्याय व इनसाफ़ पर आधारित हैं और सरकार को भी स्पष्ट तौर पर यह पैग़ाम दिया जाए कि मुसलमान किसी भी सूरत से अल्लाह की दी हुई शरीअत में दख़लअन्दाज़ी नहीं कर सकते, चाहे उन्हें इसके लिए कितनी ही क़ुरबानियाँ क्यों न देनी पड़ें।

मुस्लिम पर्सनल लॉ क्या है?

इस्लाम ज़िन्दगी के तमाम पहलुओं में रहनुमाई करता है और ईमान लानेवालों के लिए क़ानून देता है। इन क़ानूनों का एक हिस्सा वह है जिसमें .ख़ानदानी निज़ाम के बारे में हिदायतें दी गई हैं और .ख़ानदान के लोगों के हक़ और उनकी ज़िम्मेदारियाँ तय की गई हैं। इन्हें अरबी में 'क़वानीने-अहवाले-शख़्सिया' और हिन्दी (उर्दू) में '.ख़ानदानी क़ानून' और अंग्रेज़ी में Personal Law या Family Law कहा जाता है।

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

भारत में मुस्लिम शासनकाल में ज़िन्दगी के अधिकतर विभागों में इस्लामी क़ानून लागू थे और मुसलमान उन पर अमल करते थे, लेकिन जब देश की सत्ता अंग्रेज़ों के हाथ में आई तो उन्होंने धीरे-धीरे इस्लामी क़ानूनों की जगह ब्रिटिश क़ानून लागू करने शुरू किए। पहले फ़ौजदारी क़ानून .ख़त्म किया, फिर गवाही का क़ानून और मुआहिदों के क़ानून .ख़त्म किए, फिर .ख़ानदानी क़ानूनों को बदलने की तैयारी की जाने लगी। उस व.क्त मुस्लिम उलमा हरकत में आए। उन्होंने इसके ख़िलाफ़ आवाज़ उठाई और पूरे देश में आन्दोलन चलाया। उनकी ज़बरदस्त कोशिशों के बाद 1937 ई॰ में 'शरीअत एप्लिकेशन एक्ट' मंज़ूर हुआ। इस एक्ट के तहत निकाह, तलाक़, .ख़ुला, मुबारात, फ़स्खे-निकाह (निकाह .ख़त्म हो जाना), हिज़ानित (लेपालक), हिबा, वसीयत, विरासत आदि से सम्बन्धित मामलों में अगर दोनों पक्ष मुसलमान हों तो उनका फ़ैसला इस्लामी शरीअत के मुताबिक़ होगा, चाहे उनके रस्मो-रिवाज कुछ भी हों। शरीअत के क़ानून को रस्मो-रिवाज पर प्रधानता होगी। इसी को अब 'मुस्लिम पर्सनल लॉ' के नाम से जाना जाता है।

देश की आज़ादी के बाद जब संविधान बना तो उसमें 'बुनियादी हुक़ूक़' (मूल अधिकारों) के तहत सभी नागरिकों के लिए धर्म और अभिव्यक्ति की आज़ादी और हर धर्म के माननेवालों के लिए अपने धर्म पर चलने की आज़ादी की धाराएँ शामिल की गईं। ये धाराएँ मुस्लिम पर्सनल लॉ की सुरक्षा की गारंटी देती हैं, लेकिन अफ़सोस की बात यह है कि साथ ही संविधान के 'मार्गदर्शक सिद्धान्त' (Directive Principls) में एक धारा (धारा 44) यह भी रख दी गई कि सरकार देश में 'समान नागरिक संहिता' (Common Civil Code) बनाने की कोशिश करेगी। ये दोनों बातें आपस में टकराती हैं, इसी लिए संविधान सभा के मुस्लिम सदस्यों ने उस व.क्त इस पर एतिराज़ किया था, लेकिन फिर भी समान नागरिक संहिता से सम्बन्धित यह धारा संविधान में शामिल रही। इसी को बुनियाद बनाकर समय-समय पर मुस्लिम पर्सनल लॉ को .ख़त्म करने और

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

देश में समान नागरिक संहिता को लागू करने की कोशिश की जाती है और देश की आदालतें भी ऐसे फ़ैसले सुनाती हैं जो मुस्लिम पर्सनल लॉ से टकराते हैं।

इस्लाम के .ख़ानदानी क़ानूनों पर एतिराज़ात

इन दिनों एक सोची-समझी साज़िश के तहत पूरे देश में मुस्लिम पर्सनल लॉ के ख़िलाफ़ एक मुहिम छेड़ दी गई है। कहा जा रहा है कि इसके तहत मुसलमान औरतों पर ज़ुल्म होता है। इस्लाम का .ख़ानदानी क़ानून औरतों के साथ न्याय और इन्साफ़ नहीं करता, इसलिए उन्हें इन्साफ़ दिलाना संविधान के अनुसार सरकार की ज़िम्मेदारी है। इस पहलू से इस्लाम के क़ानूनों को निशाना बनाया जा रहा है। मिसाल के तौर पर कहा जा रहा है कि तलाक़ का हक़ मर्द को दिया गया है, जबकि अगर औरत अपने पति के ज़ालिमाना रवैये की वजह से उससे छुटकारा चाहे तो उसे इसका कोई अधिकार नहीं। मर्द को एक से अधिक बीवियाँ (चार तक) रखने की अनुमति है, जबकि यह औरत की गरिमा और उसके मर्तबे के ख़िलाफ़ है। तलाक़ पाई हुई औरत के भरण-पोषण की इस्लाम में कोई व्यवस्था नहीं है। विरासत में औरत का हिस्सा मर्द से आधा रखा गया है। कोई परिवार किसी बच्चे को गोद लेना और उसे अपनी औलाद का दर्जा देना चाहे तो इस्लामी क़ानून उसकी इजाज़त नहीं देता। यह और इसी तरह के बहुत से एतिराज़ात किए जाते हैं और इस्लाम के बारे में ग़लतफ़हमियाँ फैलाई जाती हैं। इस तरह इस्लामी क़ानूनों को ज़ालिमाना, औरतों के हक़ों को पामाल करनेवाला और अन्धकार युग की यादगार ठहराने की कोशिश की जाती है। दूसरी तरफ़ .ख़ुद मुसलमान शरीअत के क़ानूनों की पूरी तरह जानकारी नहीं रखते और न ही वे उन पर पूरी तरह अमल करते हैं। इसलिए वे अपने आपसी झगड़ों को क़ाज़ी की अदालत से हल कराने के बजाए देश की अदालतों में ले जाते हैं, जहाँ कभी-कभी शरीअत के ख़िलाफ़ फ़ैसले सुना दिए जाते हैं। इसलिए उचित मालूम होता है कि आगे के लेख में इस्लाम के .ख़ानदानी क़ानूनों की मुख़्तसर वज़ाहत (व्याख्या) कर

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

दी जाए ताकि उन पर किए जानेवाले एतिराज़ात दूर हो सकें और उनकी माक़ूलियत स्पष्ट हो जाए।

निकाह का इस्लामी तसव्वुर

निकाह एक समाजी और दीनी ज़रूरत है, जो सभी धर्मों में पाई जाती है। इस्लाम में निकाह का जो तसव्वुर दिया गया है वह ग़ैर मामूली अहमियत रखता है। इस्लाम के अलावा कहीं इसकी मिसाल नहीं मिलती।

जिंसी जज़्बा (कामुक भावना) इनसान के फ़ितरत में शामिल है। कभी-कभी इस ज़रूरत को पूरा करने के लिए इनसानों में अजीब तरह के तरीक़े अपनाए गए हैं। कुछ ना-समझ लोग समझते हैं कि यह बहुत बुरा काम है। उनका मानना है कि इनसान उस वक़्त तक रूहानी तरक़्क़ी नहीं कर सकता जब तक कि वह अपनी इस भावना को न दबाए और न कुचले। हम जानते हैं कि ईसाइ संन्यास और हिन्दू जोग में यह तसव्वुर पाया जाता है, यानी जिंसी जज़्बे या कामुक भावना को दबाने की कोशिश की जाती है और उसको बढ़ावा भी दिया जाता है। दूसरी तरफ़ कुछ अतिवादियों ने इस ज़रूरत को पूरा करने की खुली छूट दे दी है। उनके यहाँ कोई पाबन्दी नहीं है। इनसान जिस तरह चाहे अपनी इस ज़रूरत को पूरी कर ले।

जिंसी ज़रूरत को पूरा करने के मामले में इस्लाम ने बीच की और एक सन्तुलित राह अपनाई है। उसने न तो इस जिंसी ज़रूरत को दबाने और कुचलने की बात की है और न खुली छूट दे दी है कि उसके लिए जो तरीक़ा चाहे अपना लिया जाए। दूसरे शब्दों में न तो संन्यास को पसन्द करता है और न खुली छूट दे दिए जाने को, बल्कि उसने जिंसी ज़रूरत को पूरा करने के लिए निकाह की तालीम दी है। उसने समाज को यह हुक्म दिया है कि तुम्हारे अन्दर जो ग़ैर-शादीशुदा हों उनके निकाह कराओ और वे नौजवान या वे लोग जो ग़ैर-शादीशुदा हों उनको भी ताकीद की है कि वे शादी के बन्धन में बँध जाएँ। (क़ुरआन सूरा-24 नूर, आयत-32)

क़ुरआन समाज की यह ज़िम्मेदारी ठहराता है कि उनके बीच कोई भी

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

शख़्स चाहे वह किसी भी उम्र का हो, बग़ैर निकाह के न रहे। एक हदीस में अल्लाह के नबी मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया कि -

"ऐ नौजवानो! तुममें से जो भी निकाह करने की ताक़त रखता हो उसे निकाह कर लेना चाहिए। इसलिए कि इससे निगाहों को पाकीज़गी हासिल होती है और शर्मगाह की जिंसी ज़रूरत की हिफ़ाज़त होती है।" (हदीस : बुखारी 1905, मुस्लिम 1400)

पवित्र संस्कृति और पाकीज़ा इनसानी समाज का दारोमदार मर्द और औरत के जायज़ जिंसी ताल्लुक़ पर है, जो सिर्फ़ निकाह ही के ज़रीए क़ायम होता है। निकाह ही के ज़रिए मर्द और औरत के अन्दर ज़िम्मेदारी का एहसास पैदा होता है और वे मिलकर औलाद की परवरिश और पालन-पोषण की ज़िम्मेदारी उठाते हैं। निकाह ही के ज़रिए उनके अन्दर आपसी हमदर्दी, त्याग, क़ुरबानी, प्यार और मुहब्बत, मेहरबानी और आपसी मदद की भावना पैदा होती है। यह न हो तो इनसानी समाज ख़ुदग़रज़ दरिन्दों की एक भीड़ जैसा होगा, जिसके सामने जिंसी ख़ाहिश को पूरा करने के अलावा और कोई चीज़ न होगी।

क़ुरआन और हदीस में निकाह के बहुत-से मक़सद बयान किए गए हैं-

1. इसका सबसे बड़ा फ़ायदा यह है कि इससे इस्मत व इज़्ज़त की हिफ़ाज़त होती है और इनसान शैतान के फन्दों से महफ़ूज़ हो जाता है। (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत- 24, 25)

2. इसका दूसरा मक़सद यह है कि मियाँ-बीवी के बीच उलफ़त व मुहब्बत हो, वे एक-दूसरे के ज़रिए सुकून व राहत हासिल करें और उनका आपसी ताल्लुक़ वक़्ती और हंगामी मस्लिहतों से ऊपर होकर मज़बूत और मुस्तहकम बुनियादों पर क़ायम हो। (सूरा- रूम, आयत-21)

3. इसका तीसरा मक़सद यह है कि इसके ज़रिए नस्ले-इनसानी में इज़ाफ़ा हो, मुस्तहकम और मज़बूत ख़ानदान वजूद में आए और एक बेहतरीन तहज़ीब व तमद्दुन (सभ्यता और संस्कृति) वुजूद में आए।

निकाह इस्लाम में क़ानूनी तौर पर सिर्फ़ दो शब्दों के अदा करने से हो

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

जाता है। उन्हें ईजाब और क़बूल कहते हैं। यानी लड़का या लड़की में से कोई .ख़ुद या उसका वकील निकाह की .ख़ाहिश का इज़हार करे और दूसरा गवाहों की मौजूदगी में उसे क़बूल कर ले, बस निकाह हो गया। .ख़ाहिश करनेवाले के अलफ़ाज़ को ईजाब और मंज़ूरी देनेवाले के शब्दों को 'क़बूल' कहा जाता है। इनकी हैसियत रुक्न की है कि इनके बग़ैर निकाह होगा ही नहीं। निकाह के बारे में हुक्म यह है कि उसका ऐलान किया जाए। चोरी-छिपे तरीक़े से इसे अंजाम न दिया जाए। इसके लिए ज़रूरी है कि ईजाब व क़बूल दो गवाहों की मौजूदगी में हो।

इस्लाम में निकाह के मामले में औरत के हक़ को तस्लीम किया गया है। किसी बालिग़ लड़की का निकाह किसी लड़के से उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ नहीं किया जा सकता। निकाह के मामले में उसे आज़ादी दी गई है कि वह जिसको चाहे पसन्द करे। उसे खुल कर अपनी .ख़ाहिश के इज़हार की आज़ादी है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया है—

''औरतों का निकाह उनसे इजाज़त लेकर किया करो।''

(हदीस : नसाई-3666)

इस्लाम ने निकाह को आसान बनाया है

इस्लामी तालीमात में इससे आगे की चीज़ मिलती है, जो सबके लिए क़ाबिले-तवज्जोह है। इस्लाम ने ज़िना को मुश्किल से मुश्किलतर किया है। इसकी बहुत सख़्त सज़ा बयान की गई है, इसे इन्तिहाई फ़हश और गन्दा काम ठहराया गया है। (सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत-32) और इसकी सज़ा यह बयान की गई है कि इसके करनेवाले को 100 कोड़े मारे जाएँ और अगर वह शादी-शुदा है तो उसे पत्थर मार-मारकर हलाक कर दिया जाए। इसके मुक़ाबले में निकाह को बहुत आसान बनाया गया है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के इरशादात आप (सल्ल॰) का उसवा और सहाबा का अमल हमारे सामने है। आप (सल्ल॰) का फ़रमान है कि—

''सबसे .ज़्यादा बाबरकत निकाह वह है, जिसमें कम से कम .ख़र्च हो।''

(हदीस : मुस्नद अहमद)

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

इससे आगे की बात यह है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) और सहाबा (रज़ि॰) के ज़माने में इसका कोई तसव्वुर नहीं था कि तलाक़ पाई हुई या बेवा औरत घर में बैठी रहे। एक औरत की किसी वजह से तलाक़ हो गई हो या वह बेवा हो गई हो तो उसकी दूसरी शादी हो जाती थी, तीसरी शादी हो जाती थी, चौथी शादी हो जाती थी। उम्र के कम या ज़्यादा होने से कोई अन्तर नहीं आता था। कम उम्र लड़कियों की शादी बड़ी उम्र के मर्दों से हो जाती थी और ज़्यादा उम्र की औरतों की शादी नौजवान लड़कों से हो जाती थी। इस मामले में कोई रोक-टोक और दुश्वारी नहीं थी।

एक ख़ातून थीं हज़रत आतिका (रज़ि॰)। हज़रत अबू-बकर (रज़ि॰) के बेटे हज़रत अब्दुर्रहमान (रज़ि॰) ने उनसे निकाह किया। वे शहीद हो गए तो हज़रत ज़ैद-बिन-ख़त्ताब ने उनसे निकाह कर लिया। वे शहीद हो गए तो हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि॰) ने उनसे निकाह किया। वे शहीद हो गए तो हज़रत हसन-बिन-अली (रज़ि॰) ने उनसे निकाह कर लिया। इस तरह से उनका लक़ब 'शहीदों की बीवी' पड़ गया था। (उसदुल-ग़ाबा, इब्ने-असीर 7- 199, 200) हज़रत अस्मा-बिन्ते-उमेस हज़रत जाफ़र-बिन-अबी-तालिब की बीवी थीं। वे जंगे मौता में शहीद हुए तो हज़रत अबू-बकर (रज़ि॰) ने उनसे निकाह कर लिया। हज़रत अबू-बकर (रज़ि॰) का जब इन्तिक़ाल हो गया तो हज़रत अली (रज़ि॰) ने उनसे निकाह कर लिया।

हज़रत फ़ातिमा बिन्ते-क़ैस (रज़ि॰) बहुत मशहूर सहाबिया हैं। उनके शौहर ने उनको तलाक़ दे दी तो उनके पास तीन रिश्ते आ गए। वे प्यारे नबी (सल्ल॰) के पास गईं और कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल (सल्ल॰)! मेरे पास फ़लाँ-फ़लाँ रिश्ते आए हैं, बताइए इनमें से कौन सा रिश्ता मेरे लिए बेहतर होगा। प्यारे नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया : अगर मुझसे राय लेती हो तो तुम उनके बजाए उसामा-बिन-ज़ैद से निकाह कर लो। चुनांचे उन्होंने हज़रत उसामा (रज़ि॰) से निकाह कर लिया। वे ख़ुद बयान करती हैं कि मेरा यह रिश्ता बहुत बाबरकत साबित हुआ। (मुस्लिम)

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

निकाह की .ख़र्चीली रस्में

लेकिन अफ़सोस कि मुस्लिम समाज में निकाह की बहुत-सी फ़ुज़ूलख़र्ची की रस्में आम हो गई हैं। इनके ज़रिए दिल के अरमान निकाले जाते हैं, पुर तकल्लुफ़ दावतें होती हैं। दूल्हा-दुल्हन और क़रीब व दूर के रिश्तेदारों के जोड़े तैयार किए जाते हैं। ढोल, बाजा, सलामी, जहेज़, तिलक, बारात, चौथी और न जाने कौन-कौन सी रस्में ईजाद कर ली गई हैं, जिनकी पाबन्दी लाज़िमी समझी जाती है। इन फ़ुज़ूलख़र्चियों की वजह से लड़कियों के सरपरस्तों को भारी क़र्ज़ तक लेने की नौबत आ जाती है। इन्हीं वजहों से बहुत-सी कुँवारी लड़कियाँ बिन-बियाही बैठी रह जाती हैं और उनके रिश्ते नहीं मिल पाते। ये सारी रस्में मुसलमानों में दूसरे समाजों से आई हैं। इस तरह उन्होंने भारी बेड़ियाँ अपने पैरों में डाल ली हैं।

इस्लाम में जहेज़ का कोई तसव्वुर नहीं है। प्यारे नबी (सल्ल॰) के दौर में जितनी शादियाँ हुईं, किसी में भी जहेज़ का कोई तज़किरा नहीं मिलता। आज समाज में जिस बड़ी मिक़दार में और जिस दिखावे के साथ जहेज़ का लैन-दैन होता है, इसकी दीन में कोई गुंजाइश नहीं है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की बीवियों का महर पाँच सौ दिरहम था। यही महर हज़रत फ़ातिमा का भी था। हालाँकि हज़रत अली (रज़ि॰) शुरू ही से आप (सल्ल॰) के पालन-पोषण में थे और आप (सल्ल॰) के साथ रहते थे। जब निकाह का मौक़ा आया तो आप (सल्ल॰) ने उनसे पूछा : तुम्हारे पास क्या है? उन्होंने जवाब दिया मेरी ज़ाती मिल्कियत में कुछ नहीं है। प्यारे नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया तुम्हारे पास जो ज़िरह है उसे बेच लाओ। उन्होंने ज़िरह बेची। उससे जो रक़म वसूल हुई उससे आप (सल्ल॰) ने घर-ग्रहस्थी का सामान .ख़रीदवाया और उसी से महर अदा करवाया।

इसी तरह प्यारे नबी (सल्ल॰) के दौर में होनेवाली शादियों में बारात का कोई तसव्वुर नहीं था। हज़रत अब्दुर्रहमान-बिन-औफ़ (रज़ि॰) की गिनती मदीने के बहुत ही मालदारों में होती थी। उनका जब निकाह हुआ तो उन्होंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को भी बुलाने की ज़रूरत नहीं समझी।

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

बाद में जब आप (सल्ल॰) को मालूम हुआ तो आप (सल्ल॰) ने उनसे फ़रमाया ''ऐ अब्दुर्रहमान ! वलीमा करो, चाहे उसमें एक बकरी ही ज़बह करो।'' (बुखारी 5072, मुस्लिम 1427) ग़ौर करने की बात है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की ज़ात कितनी बाबरकत और मुहतरम थी। एक छोटी बस्ती में निकाह की मजलिस होती है, लेकिन आप (सल्ल॰) को बुलाने की ज़रूरत महसूस नहीं की जाती।

ज़रूरत है कि मुसलमानों में संजीदा और बाशुऊर लोग इन फ़ुज़ूलख़र्ची की रस्मों के ख़िलाफ़ तहरीक चलाएँ और निकाह को सादा और आसान बनाने की कोशिश करें।

एक से ज़्यादा बीवियाँ (बहुविवाह)

इस्लाम ने इंसाफ़ की शर्त के साथ मर्दों को एक से ज़्यादा बीवियाँ रखने की इजाज़त दी है। इसकी ज़्यादा से ज़्यादा हद चार तय की गई है। (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-3) इस्लाम का विरोध करनेवाले लोग इस्लाम की इस तालीम को निशाना बनाते हैं और इस पर बेजा एतिराज़ात करते हैं। इस पर कई पहलुओं से ग़ौर करने की ज़रूरत है।

1. यह इस्लाम का हुक्म नहीं कि इसको मानना और इस पर अमल करना तमाम लोगों के लिए ज़रूरी हो, बल्कि यह एक इजाज़त है कि अगर आदमी असल में ज़रूरत महसूस करे तो एक से ज़्यादा यानी एक वक़्त में चार औरतों तक से निकाह कर सकता है।

2. कभी भी ग़ैर मामूली हालात पेश आ सकते हैं, मिसाल के तौर पर जंगें पहले भी होती थीं और अब भी जारी हैं। अगर कभी किसी इलाक़े में बड़े पैमाने पर मर्द हलाक हो जाएँ और औरतों का तनासुब ज़िन्दा बच जाने वाले मर्दों से कहीं ज़्यादा हो तो एक से ज़्यादा निकाह के ज़रिए इस मसले पर क़ाबू पाया जा सकता है। अगर इसकी इजाज़त न दी जाए तो बदकारी और बेहयाई आम होने की सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं।

3. कभी-कभी किसी आदमी के निजी हालात भी एक से ज़्यादा औरत से निकाह करने का तक़ाज़ा करते हैं। मिसाल के तौर पर किसी आदमी

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

की बीवी किसी सख़्त बीमारी में पड़ जाए, जिसकी वजह से वह मियाँ-बीवी के ताल्लुक़ात निभाने में नाकाम हो। अब या तो आदमी उसे तलाक़ देकर दूसरा निकाह कर ले, या उसे भी बीवी की हैसियत से बाक़ी रखे, या किसी शख़्स की कोई रिश्तेदार औरत को तलाक़ हो जाए या बेवा हो जाए और उसे सहारे की ज़रूरत हो।

4. क़ुरआन ने एक से ज़्यादा औरतों के साथ निकाह करने के मामले में इंसाफ़ की शर्त लगाई है। क़ुरआन ने जहाँ चार औरतों तक से निकाह करने की इजाज़त दी है वहीं साथ ही यह भी कहा है कि-

''अगर तुम्हें डर हो कि उनके साथ इंसाफ़ न कर सकोगे तो फिर एक ही बीवी करो।'' (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-3)

5. यह मान लेना ग़लत है कि मुसलमानों में एक से ज़्यादा औरतों के साथ निकाह करने का चलन बहुत ज़्यादा है। भारत में हर दस साल पर आबादी के जो आँकड़े जमा किए जाते हैं उनके मुताबिक़ मुसलमानों में एक से ज़्यादा बीवियाँ रखने का अनुपात हिन्दुओं से कम है, जबकि हिन्दू समाज को एक बीवी के होते हुए क़ानूनी तौर से दूसरी बीवी रखने की अनुमति नहीं है।

ख़ानदानी निज़ाम में मर्द और औरत के काम करने का दायरा

इस्लाम ने मर्दों और औरतों के बीच बराबरी का एलान किया और ज़िन्दगी के मुख़्तलिफ़ मैदानों जैसे तालीम, रोज़गार के लिए कोशिश और मिल्कियत वग़ैरा में औरतों को मर्दों के बराबर हक़ अता किए। मग़रिब में औरतों को जो हक़ लम्बी-चौड़ी माँगें, ज़बरदस्त विरोध- प्रदर्शन और लम्बे समय तक आन्दोलन चलाने के बाद उन्नीसवीं और बीसवीं सदी में हासिल हो सके हैं, इस्लाम ने सदियों पहले से उन्हें वे हुक़ूक़ दिए हैं। लेकिन मर्दों और औरतों के हक़ों में बराबरी का मतलब फ़रायज़ (दायित्त्वों) और ज़िम्मेदारियों में बराबरी नहीं है। इस्लाम ने दोनों के काम का दायरा

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

अलग-अलग तय किया है। कामों की यह तक़सीम उनकी फ़ितरत के ठीक मुताबिक़ है। औरतों को बच्चों की पैदाइश, परवरिश और घर की देखभाल का काम सौंपा, जबकि मर्दों पर ख़ानदान के पालन-पोषण की ज़िम्मेदारी का बोझ डाला गया है। अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया कि-

"मर्द अपने घरवालों का निगराँ है, उससे उसकी ज़ेरे-निगरानी लोगों के बारे में सवाल होगा। औरत अपने शौहर के घरवालों और उसके बच्चों की निगराँ है। उससे उनके बारे में सवाल होगा।"

(हदीस : बुखारी-7138, मुस्लिम-1829)

औरत की इस अहम ज़िम्मेदारी को अच्छी तरह अंजाम देने के लिए उसकी ज़िम्मेदारियों में घर से बाहर के काम और रोज़गार की दौड़-धूप को शामिल नहीं किया गया है, बल्कि उसके भरण-पोषण की ज़िम्मेदारी मर्द पर डाली गई है। इसका मतलब यह नहीं है कि इस्लाम ने औरत को मर्द का मातहत और ग़ुलाम बना दिया है और मर्द को उस पर हाकिमाना और जाबिराना इख़्तियारात दे दिए हैं। औरत को रोज़गार की भागदौड़ से दूर रखना उसकी इज़्ज़त बढ़ाना है न कि उसकी हैसियत को कम करके दिखाना। इसी तरह इसका मतलब यह भी नहीं है कि अगर कोई औरत दौलत कमाने की कोशिश करना चाहे तो इस्लाम ने उसे इससे रोका है। अगर वह अपनी बुनियादी ज़िम्मेदारियाँ अदा करते हुए और शरिअत के दायरे में रहते हुए ऐसा करना चाहे तो उस पर कोई पाबन्दी नहीं है। इसके नतीजे में उसे जो कुछ आमदनी हासिल होगी, उस पर उसे पूरा इख़्तियार होगा।

इस्लाम में मर्द और औरत आपस में दो पक्ष नहीं हैं, बल्कि साथी हैं। वे एक-दूसरे के विरोधी नहीं, बल्कि दोस्त हैं। हर एक के हक़ तय कर दिए गए हैं और हर एक की ज़िम्मेदारियों को भी बता दिया गया है। फ़रमाया गया है -

"मोमिन मर्द और मोमिन औरतें, ये सब एक-दूसरे के दोस्त हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत-71)

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

मर्द और औरत दोनों के काम के मैदानों की वज़ाहत और ज़िम्मेदारियों को तय कर देने के साथ इस्लाम ने मर्द पर एक और ज़िम्मेदारी डाली है और वह है .ख़ानदान के मुखिया की ज़िम्मेदारी। किसी भी संस्था (Institution) को ठीक तौर पर चलाने के लिए ज़रूरी है कि उसका एक मुखिया हो जो उसके तमाम कामों की निगरानी करे। उसके नज़्म व ज़ब्त (प्रबन्ध) को ठीक रखे उससे जुड़े सभी लोगों की सरगर्मियों पर नज़र रखे। उसी तरह यह भी ज़रूरी है कि उसके मातहतों और उसके बीच मुहब्बत और .ख़ैरख़ाही पर आधारित आपसी ताल्लुक़ पाया जाए। वह उनके हक़ पहचाने और उनको सुरक्षा दे और वे लोग भी पूरी .ख़ुश दिली के साथ नेकी के दायरे में उसके हुक्मों को पूरा करें और उनसे बग़ावत न करें। यह ज़िम्मेदारी किसी एक आदमी को ही दी जा सकती है। अगर बराबरी के हक़ और इख़्तियार के साथ एक से .ज़्यादा लोगों को किसी संस्था के मुखिया की ज़िम्मेदारी सौंप दी जाए और हर एक अपनी आज़ाद मर्ज़ी से उस संस्था को चलाना चाहे तो उसका निज़ाम बिगड़ जाना यक़ीनी है। मर्द और औरत .ख़ानदानी निज़ाम के दो बुनियादी अरकान हैं। इसकी सरदारी उनमें से किसी एक को ही दी जा सकती थी। इस्लाम ने यह ज़िम्मेदारी मर्द के हवाले की। क़ुरआन में इसी को 'दर्जा' कहा है। अल्लाह का फ़रमान है:

''औरतों के लिए भी भले तरीक़े पर वैसे ही हक़ हैं जैसे मर्दों के हक़ उन पर हैं, अलबत्ता मर्दों को उन पर एक दर्जा हासिल है।''

(क़ुरआन सूरा-2 बक़रा, आयत-228)

इसी ज़िम्मेदारी की बिना पर मर्द को क़ुरआन में 'क़व्वाम' (निगराँ) कहा गया है—

'' मर्द औरतों के निगराँ हैं, इस वजह से कि अल्लाह ने इनमें से एक को दूसरे पर फ़ज़ीलत दी है और इस वजह से कि मर्द अपना माल .ख़र्च करते हैं।'' (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-34)

मर्दों को सरदारी और निगरानी के इख़्तियारात देने के साथ क़ुरआन

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

और हदीस में मर्दों और औरतों दोनों के हक़ और फ़रायज़ के सिलसिले में वाज़ेह हिदायतें दे दी गई हैं।

मियाँ-बीवी के हक़ और ज़िम्मेदारियाँ

हुक़ूक़ और फ़रायज़ (अधिकारों और दायित्त्वों) का आपस में गहरा ताल्लुक़ है। शादी के रिश्ते में बँधने के बाद शौहर के जो हक़ हैं वे बीवी के फ़रायज़ बन जाते हैं और बीवी के हक़ हैं उनकी गिनती शौहर के फ़रायज़ में होती है। अल्लाह का फ़रमान है—

''औरतों के लिए भी भले तरीक़े पर वैसे ही हक़ हैं जैसे मर्दों के हक़ उन पर हैं।'' (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-228)

शौहर के जो हक़ बीवी पर हैं उनमें से दो अहम ये हैं—

पहला हक़ यह है कि भलाई के मामलों में बीवी शौहर की इताअत और फ़रमाँबरदारी करे। अल्लाह का फ़रमान है—

''जो नेक औरतें हैं वे इताअत करनेवाली होती हैं और मर्दों के पीछे अल्लाह की हिफ़ाज़त व निगरानी में उनके हक़ों की हिफ़ाज़त करती हैं।''

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-34)

इस आयत में नेक औरतों की दूसरी ख़ूबी यह बयान की गई है कि वे ''ग़ैब की हिफ़ाज़त'' करती हैं। असल में यही औरत पर शौहर का दूसरा हक़ है। ग़ैब की हिफ़ाज़त मतलब उस चीज़ की हिफ़ाज़त है जो शौहर की ग़ैर हाज़िरी में औरत के पास बतौर अमानत होती है। इसमें नसब और इज़्ज़त-आबरू की हिफ़ाज़त, माल की हिफ़ाज़त, बच्चों की परवरिश और राज़ों की हिफ़ाज़त सब कुछ शामिल है।

इस्लाम ने ख़ानदानी निज़ाम में बीवी के हक़ों को भी महफ़ूज़ किया है, ताकि शौहर अपने इख़्तियारात से फ़ायदा उठाकर उस पर बेजा ज़ुल्म न कर सके और वह समाजी निज़ाम में अपनी फ़ितरी सलाहियतों को बेहतर तरीक़े से काम में ला सके।

बीवी का पहला हक़ महर है। अल्लाह ने शौहर को उसकी अदायगी का हुक्म दिया है। अल्लाह का फ़रमान है कि-

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

''और औरतों के महर ख़ुश दिली के साथ अदा करो।''

(क़ुरआन सूरा-4 निसा, आयत-4)

महर वह रक़म है जो मर्द निकाह के वक़्त औरत को अदा करता है या अदा करने का वादा करता है। इसकी दो क़िस्में बयान की गई हैं। एक महरे-मुअज्जल, यानी वह महर जो निकाह के वक़्त फ़ौरन अदा कर दी जाए। दूसरी महरे-मुवज्जल यानी वह महर जिसे बाद में अदा करने का वादा कर लिया जाए। महर की अदायगी शौहर के ज़िम्मे लाज़िम होती है। इसलिए उसे उतना ही मुक़र्रर करना चाहिए जितना शौहर आसानी से अदा कर सके। महज़ फ़ख्र जताने के लिए या इस वजह से कि शौहर बीवी को तलाक़ न दे सके, महर बहुत ज्यादा मुक़र्रर करना शरई एतिबार से ठीक नहीं है। दूसरे ख़लीफ़ा हज़रत उमर (रज़ि॰) के ज़माने में जब लोग बहुत ज्यादा महर मुक़र्रर करने लगे तो उन्होंने एक बार ख़ुत्बा देते हुए फ़रमाया ''लोगो ! महर मुक़र्रर करने में हद से न बढ़ो, अगर यह दुनिया में फ़ख्र और इज़्ज़त या आख़िरत में अज्र व सवाब की बात होती तो अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) सबसे पहले इसे अपनाते।'' (अबू-दाऊद 2106)

प्यारे नबी (सल्ल॰) ने अपनी बेटी हज़रत फ़ातिमा (रज़ि॰) का निकाह हज़रत अली से किया तो उनका महर पाँच सो दिरहम मुक़र्रर फ़रमाया था। इसे महरे-फ़ातमी कहा जाता है। मौजूदा वज़न के एतिबार से यह 1531 ग्राम (क़रीब डेढ़ किलो) चाँदी के बराबर है।

अगर निकाह के वक़्त महर तय नहीं किया गया तो वह माफ़ नहीं होगा, बल्कि औरत को महरे-मिस्ल देना होगा। इससे मुराद महर की वह मिक़दार है जो आम तौर पर उसके ख़ानदान की औरतों की मुक़र्रर होती है। महर में नक़द रक़म के बजाए कोई मनक़ूला सामान (चल सम्पत्ति) या ग़ैर-मनक़ूला जायदाद (अचल सम्पत्ति) जैसे मकान ज़मीन आदि भी दी जा सकती है। निकाह के मौक़े पर ज़ेवरात भी बतौर महर दिए जा सकते हैं, लेकिन इसको खोलकर बयान करना ज़रूरी है, ताकि यह ग़लतफ़हमी न रहे कि उन्हें बतौर हदिया दिया गया है।

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

बीवी का दूसरा हक़ यह है कि शौहर उसके नफ़क़ा (भरण-पोषण) का इन्तिज़ाम करे। शौहर का फ़र्ज़ है वह अपनी बीवी के लिए खाना, कपड़ा, मकान और ज़िन्दगी के अन्य ज़रूरी सामान का इन्तिज़ाम करे। (क़ुरआन सूरा-4 निसा, आयत-34)। नफ़क़े (भरण-पोषण) का कोई तय शुदा मैयार नहीं है, बल्कि वह शौहर की आमदनी और हैसियत के मुताबिक़ कम या .ज्यादा हो सकता है। (क़ुरआन सूरा-2 बक़रा, आयत-236; सूरा-तलाक़, आयत-7)

नफ़क़े (भरण-पोषण) में औरत की श्रंगार की चीज़ें, दवा इलाज का .खर्च, दाया के .खर्च और रोज़मर्रह की ज़रूरत की चीज़ें भी शामिल हैं। औरत शौहर के माल में से ज़रूरत के मुताबिक़ मौक़े-मौक़े से .खर्च कर सकती है। अगर शौहर ने उसे इजाज़त दे रखी हो। शौहर अपनी बीवी को घर के इन्तिज़ाम के लिए जो कुछ दे उसमें से बीवी अगर कुछ बचा ले तो यह उसका हक़ है। शौहर न उसे वापस ले सकता है और न उसके नफ़क़े में कमी कर सकता है।

बीवी का तीसरा हक़ यह है कि शौहर उसके साथ अच्छा सुलूक करे। क़ुरआन व हदीस में इसके बारे में साफ़ हुक्म मौजूद हैं। अल्लाह का फ़रमान है :

''इनके साथ भले तरीक़े से ज़िन्दगी बसर करो।''

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-19)

एक हदीस में है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमायाः ''ईमानवालों में सबसे .ज्यादा कामिल वह शख़्स है जिसका अख़लाक़ सबसे बेहतर हो और तुम में सबसे बेहतर लोग वे हैं जिनके अख़लाक़ अपनी औरतों के साथ बेहतर हों।'' (हदीस : तिरमिज़ी 1162)

शौहर-बीवी के बीच तालमेल न बनने का हल

अगर शौहर-बीवी अल्लाह की हदों और सीमाओं का पास-लिहाज़ करते हुए एक-दूसरे के हक़ों को पहचानते ओर उन्हें अदा करते हुए ज़िन्दगी गुज़ारें, एक-दूसरे की कमज़ोरियों को नज़रअन्दाज़ करें और मिलजुलकर

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

अपने बच्चों की परवरिश और तालीम व तरबियत में लगे रहें तो घर जन्नत बन जाता है। लेकिन अगर वे एक-दूसरे के हक़ न पहचानें, शौहर बीवी पर ज़ुल्म करे, उसे नाहक़ सताए या बीवी शौहर के हुक्मों पर अमल न करे और ख़ुदसरी और बग़ावत करे तो घर जहन्नम बन जाता है। शौहर और बीवी के बीच जो सुकून है वह ग़ारत हो जाता है और बच्चों की सही ढंग से परवरिश नहीं हो पाती।

इस मामले में क़ुरआन ने ख़ास तौर पर मर्दों को बरदाश्त से काम लेने और नाफ़रमान औरतों की इस्लाह और तरबियत करने की ताकीद की है। उसने हुक्म दिया है कि अगर औरतों का कोई रवैया या आदत उन्हें नापसन्द हो तो भी इस रिश्ते को ख़त्म करने के दरपे न हों, बल्कि यह सोचें कि मुमकिन है, अल्लाह ने इसमें बहुत कुछ भलाई रख दी हो। (क़ुरआन सूरा-4 निसा, आयत-19) यही नहीं बल्कि क़ुरआन इससे आगे की बात यह कहता है कि अगर कोई औरत नाफ़रमानी, सरकशी या बग़ावत पर उतर आए तो शुरू में उसे समझाने-बुझाने की कोशिश की जाए, फिर भी वह अपना रवैया ठीक न करे तो उनसे बिस्तर अलग कर लिया जाए और इस पर भी वह अपनी इस्लाह न करे तो बतौर सख़्ती और तंबीह के उस पर जिस्मानी सरज़निश की जाए, लेकिन किसी भी सूरत में ख़ाह-मख़ाह उस पर बेजा हाथ न उठाया जाए। (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-34)

इख़्तिलाफ़ात दूर करने में ख़ानदानवालों का तआवुन

इसका मतलब यह है कि अगर शौहर-बीवी के बीच इख़्तिलाफ़ पैदा हो जाएँ तो शुरू के मरहले में वे ख़ुद उन्हें हल करने की कोशिश करें, लेकिन अगर वे इसमें कामयाब न हो सकें, इख़्तिलाफ़ात बाक़ी रहें, दोनों के दिल एक-दूसरे से फट जाएँ और उनके बीच दूरियाँ बढ़ जाएँ तो ख़ानदान वालों की ज़िम्मेदारी है कि उनके बीच समझौता कराने और एक-दूसरे की शिकायतों को दूर करने की कोशिश करें। अल्लाह का फ़रमान है :

''और अगर तुम लोगों को मियाँ-बीवी के ताल्लुक़ात बिगड़ जाने का

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

डर हो तो एक पंच मर्द के रिश्तेदारों में से और एक औरत के रिश्तेदारों में से मुक़र्रर करो। वे दोनों इस्लाह करना चाहेंगे तो अल्लाह उनके बीची तालमेल की सूरत निकाल देगा।'' (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-35)

अगर यह तदबीर भी कारगर न हो और उनके बीच बिगाड़ नफ़रत की हद तक पहुँच जाए तो इसका मतलब यह है कि अब उनका एक जगह रहना बेकार है। फिर मुनासिब यह है कि दोनों अपनी-अपनी राह लें और अलग होकर, अगर चाहें तो हर एक अपने लिए कोई दूसरा मुनासिब रिश्ता तलाश करे।

तलाक़ एक नाख़ुशगवार ज़रूरत

आजकल मीडिया में तलाक़ का विषय छाया हुआ है। औरतों की मज़लूमियत के सही और ग़लत वाक़िआत पेश किए जा रहे हैं, तलाक़ को एक ज़ालिमाना अमल क़रार दिया जा रहा है और उस पर पाबन्दी लगाने की माँग की जा रही है। इसकी वजह यह है कि लोग इसकी हिकमत से अनजान हैं और इस्लामी शरीअत में इसकी ज़रूरत और अहमियत उनकी निगाहों से ओझल है।

निकाह मर्द और औरत के बीच एक समझौता है। क़ुरआन मजीद में उसे ''मीसाक़े-ग़लीज़'' (मज़बूत समझौता) कहा गया है। इसलिए निकाह को जहाँ तक सम्भव हो और जहाँ तक ताक़त हो बाक़ी रखने की कोशिश करनी चाहिए। तलाक़ की नौबत उसी वक़्त आनी चाहिए, जबकि बात को बनाने और तालमेल पैदा करने की कोई तदबीर और उपाय कारगर न हो।

तलाक़ असल में एक ऑप्रेशन है, जिसकी ज़रूरत उस वक़्त पड़ती है जब इलाज-मुआलजे की दूसरी तमाम तदबीरें नाकाम हो जाएँ। मियाँ-बीवी के ताल्लुक़ात में बिगाड़ आ जाए और उनको ठीक करने के लिए कोई उपाय कारगर न हो तो शादी-शुदा ज़िन्दगी का बिगाड़ दूर करने के लिए मजबूरन तलाक़ का सहारा लेने की शरीअत ने इजाज़त दी है। ग़लत ऑप्रेशन से मरीज़ मर जाए तो कोई नहीं कहता कि ऑप्रेशन पर पाबन्दी लगा दी जाए। इसी तरह अगर तलाक़ का ग़लत इस्तेमाल होने लगे तो उस

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

पर पाबन्दी लगाने की माँग करना दुरुस्त नहीं है, बल्कि इसके बजाय इसकी ज़रूरत को तसलीम करते हुए इसके सही इस्तेमाल को समझाना चाहिए।

शरीअत ने तलाक़ की इजाज़त उस वक़्त दी है जब निबाह की कोई सूरत बाक़ी न बची हो और बीवी से शौहर की नफ़रत हद से ज़्यादा बढ़ गई हो। तलाक़ के मानी बन्धन खोलने के हैं। मानो निकाह के ज़रिए जो बन्धन क़ायम हुआ था वह तलाक़ के ज़रिए खोल दिया जाता है। इस्लामी शरीअत में हालाँकि तलाक़ की इजाज़त दी गई है, लेकिन इसे नापसन्दीदा ठहराया गया है। एक हदीस में है कि शैतान को सबसे ज़्यादा ख़ुशी इस बात से होती है कि एक ख़ानदान बरबाद हो जाए और मियाँ-बीवी के बीच अलेहदगी हो जाए। (मुस्लिम-2813)

तलाक़ की क़िस्में

तलाक़ की तीन क़िस्में हैं :

(1) तलाक़े-रजई : यानी वह तलाक़ जिसमें शौहर बग़ैर नए निकाह के बीवी को वापस ले सकता है, चाहे बीवी राज़ी हो या न हो। यह उस वक़्त होगा, जब शौहर साफ़ अलफ़ाज़ में तलाक़ दे, फिर इद्दत पूरी होने से पहले ही रुजूअ कर ले।

(2) तलाक़े-बाइन : यानी वह तलाक़, जिसमें शौहर बीवी से, उसकी मर्ज़ी हो तो दोबारा निकाह कर सकता है। यानी इसमें बीवी की मर्ज़ी ज़रूरी है और वह नए महर की मुस्तहिक़ होगी। यह उस वक़्त होगा जब शौहर तलाक़ दे, फिर ईद्दत पूरी हो जाए।

(3) तलाक़े-मुग़ल्लज़ : वह तलाक़ जिसके बाद शौहर बीवी को वापस नहीं ले सकता। ऐसा तीसरी तलाक़ की सूरत में होता है। तलाक़े-मुग़ल्लज़ के बाद औरत शौहर पर हराम हो जाती है। अलबत्ता अगर उसका किसी दूसरे मर्द से निकाह हो जाए, फिर वह भी उसे तलाक़ दे दे, या उसका इन्तिक़ाल हो जाए तो पिछले शौहर से दोबारा उसका निकाह हो सकता है,

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

शर्त यह है कि दोनों राज़ी हों।

तलाक़ देने के तरीक़े

तलाक़ के दो तरीक़े हैं :

(1) तलाक़े-सुन्नत : इसका तरीक़ा यह है कि शौहर औरत को पाकीज़गी की हालत में (यानी जब औरत हैज़ से पाक रहती है), जबकि उसने हमबिस्तरी (सम्भोग) न की हो, एक तलाक़े-रजई दे और इद्दत गुज़र जाने दे। इद्दत पूरी होते ही एक तलाक़े-बाइन पड़ जाएगी और अलैहदगी हो जाएगी। यह तलाक़े-अहसन है। शौहर यह भी कर सकता है कि एक तलाक़ पाकीज़गी की हालत में दे, फिर हैज़ के बाद जब औरत दोबारा पाकीज़गी की हालत में आए तो दूसरी तलाक़ दे, इसी तरह पाकीज़गी की हालत में तीसरी तलाक़ दे। इसमें भी शर्त है कि इस मुद्दत में औरत के साथ हमबिस्तरी न करे। इसे तलाक़े-हसन कहते हैं।

(2) तलाक़े-बिदअत : यानी सुन्नत के ख़िलाफ़ दी गई तलाक़। आदमी एक ही बार में दो या तीन तलाक़ें दे दे, या हैज़ की हालत में तलाक़ दे, या उसकी पाकी की हालत में तलाक़ दे जिसमें हमबिस्तरी कर चुका हो।

अगर तलाक़ देने की नौबत आ जाए तो बेहतर है कि तलाक़े-अहसन का तरीक़ा इख़्तियार किया जाए, यानी एक तलाक़ देकर छोड़ दिया जाए। तलाक़े-बिदअत से मना किया गया है, लेकिन अगर कोई शख़्स ऐसी तलाक़ दे तो तलाक़ हो जाएगी और तलाक़ देनेवाला गुनाहगार होगा। तलाक़े-अहसन की सूरत में शौहर को सोच-विचार करने का ख़ूब मौक़ा मिलेगा। औरत इद्दत के दौरान उसके घर ही में रहेगी। अगर शौहर चाहे तो इद्दत ख़त्म होने से पहले निकाह कर सकता है। अगर इद्दत गुज़र जाए तो औरत आज़ाद हो जाएगी। लेकिन फिर भी यह मौक़ा बाक़ी रहेगा कि अगर मर्द-औरत आमादा हों तो दोनों दोबारा नए महर के साथ फिर से निकाह कर सकते हैं। तलाक़ का मक़सद निकाह के रिश्ते को ख़त्म करना है। यह मक़सद एक तलाक़ से अच्छी तरह पूरा हो जाता है।

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

ज़िन्दगी के हर मामले में इनसानी रवैया यह होता है कि जिस चीज़ की जितनी ज़रूरत हो उतना ही इस्तेमाल करता है। एक गिलास पानी प्यास बुझा दे तो वह दस गिलास पानी नहीं पीता। बच्चे को एक चपत से सबक़ सिखाया जा सकता हो तो उस पर डंडे नहीं बरसाता। एक गोली खाने से बदन का दर्द दूर हो जाए तो महीनों भारी ख़ूराकें नहीं लेता। फिर अगर उसने बीवी को अपनी ज़िन्दगी से अलग करने का पक्का इरादा ही कर लिया है तो जो काम एक तलाक़ से हो जाता हो, उसे अंजाम देने के लिए एक ही वक्त में तीन तलाक़ क्यों दे?

क़ुरआन का मंशा यह मालूम होता है कि वह मर्द को दो बार अलग-अलग यह मौक़ा देना चाहता है। (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-229) चुनांचे वह तंबीह करता है कि अगर उसने तीसरी बार तलक़ दे दी तो वह हमेशा के लिए उस औरत से महरूम हो जाएगा। (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-230) एक ही वक्त में तीन बार तलाक़ देने से ये मौक़े हाथ से निकल जाते हैं। यही वजह है कि प्यारे नबी (सल्ल॰) के दौर में एक बार एक शख़्स ने एक ही वक्त में तीनों तलाक़ दे दीं। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) तक जब यह ख़बर पहुँची तो आप सख़्त नाराज़ हुए और फ़रमाया ''क्या मेरी मौजूदगी में अल्लाह की किताब के साथ खिलवाड़ किया जाएगा।'' (हदीस : नसाई)

तीन तलाक़ का मसला

अगर कोई आदमी एक ही वक़्त में तीन तलाक़ दे दे तो उसका क्या हुक्म है? इस सिलसिले में उम्मत में दो रायें पाई जाती हैं। बहुत-से सहाबा, ताबेईन और चारों इमाम इसे तीन तलाक़ मानते हैं, जबकि कुछ सहाबा और ताबेईन के अलावा अल्लामा इब्ने-तैमिया, अल्लामा इब्ने-क़य्यिम, शैख दाऊद ज़ाहिरी और अल्लामा शोकानी (रह॰) और अहले-हदीस हज़रात के नज़दीक इसे एक तलाक़ गिना जाएगा। दोनों मसलकवालों के अपने दलायल हैं और उन पर बहुत ज़माने से अमल हो रहा है।

हनफ़ी मसलक के आलिम कहते हैं कि अगर कोई शख़्स तलाक़ देते

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

वक़्त एक से ज़्यादा मरतबा 'तलाक़' शब्द का इस्तेमाल करे, लेकिन वह कहे कि उसका इरादा एक तलाक़ देने ही का था, उसने सिर्फ़ ताकीद की नीयत से एक से ज़्यादा बार यह शब्द दोहराया था, तो उसकी बात मानी जाएगी और सिर्फ़ एक तलाक़ ही मानी जाएगी।

तलाक़ के मामले में मुसलमानों के बीच बड़ी ग़लतफ़हमियाँ हैं। वे समझते हैं कि जब तक तीन तलाक़ें नहीं दी जाएँगी तब तक तलाक़ होगी ही नहीं। इस ग़लतफ़हमी को दूर करने की ज़रूरत है।

मंसूबाबन्द हलाला हराम है

मुसलमानों में बहुत-से लोग जहालत की वजह से ग़ुस्से में एक ही वक्त में तीन तलाक़ दे बैठते हैं, फिर जब उन्हें बताया जाता है कि बीवी तुम पर हमेशा के लिए हराम हो गई है, अब दोबारा उसके हलाल होने का इम्कान सिर्फ़ उस वक़्त है जब अल्लाह की मर्ज़ी से वह सूरत पेश आए जिसका ज़िक्र क़ुरआन (सूरा-2 बक़रा, आयत-230) में है तो वे कोशिश करते हैं कि कोई ऐसा आदमी तैयार कर लें जो उनकी तलाक़ पाई हुई बीवी से निकाह करके फिर तलाक़ दे दे, ताकि उनके लिए दोबारा से उससे निकाह कर लेना जायज़ हो जाए। इस्तिलाह (परिभाषा) में इसे 'हलाला' कहा जाता है।

किसी मंसूबे के बग़ैर यह सूरते-हाल फ़ितरी तौर पर पेश आए कि कोई शख़्स अपनी बीवी को तीन तलाक़ दे दे, फिर उसका निकाह किसी और मर्द से हो जाए, फिर किसी वजह से वह भी तलाक़ दे दे या उसकी मौत हो जाए तो पहला शौहर दोबारा उससे निकाह कर सकता है, लेकिन यह तरीक़ा मंसूबा बनाकर अपनाया जाए तो इन्तिहाई घिनावना और ग़ैर शरीफ़ाना है और इस्लाम में क़तई तौर पर हराम है। जो शख़्स इस काम के लिए ख़ुद को पेश करता है, उसे अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने किराये का साँड कहा है।

हज़रत उक़बा-बिन-आमिर बयान करते हैं कि अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने एक बार सहाबा से पूछा कि ''क्या मैं तुम्हें बताऊँ कि 'किराये का साँड'

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

कौन है? सहाबा ने जवाब दिया : जी हाँ, ऐ अल्लाह के रसूल! आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया : वह शख़्स जो किसी आदमी के अपनी बीवी को तीन तलाक़ देने के बाद, उस औरत से निकाह करने के लिए .ख़ुद को पेश करे, ताकि उस आदमी से किए गए वादे के मुताबिक़ उस औरत को तलाक़ देकर पहले शौहर का निकाह उससे हलाल कर दे। उसके बाद अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने आगे फ़रमाया, ''अल्लाह की लानत है उस शख़्स पर जो इस काम के लिए .ख़ुद को पेश करे और उस शख़्स पर भी जो उससे यह काम कराए।'' (हदीस : इब्ने-माजा 1936)

.ग़ौर करना चाहिए कि बीवी से अलेहदगी अगर एक तलाक़ के ज़रिए हो जाए तो उस काम के लिए तीन तलाक़ें क्यों दी जाएँ? फिर तीन तलाक़ देने के बाद जब बीवी हमेशा के लिए हराम हो जाए तो उसको हलाल करने के लिए ऐसे तरीक़े ढूँढे जाएँ जो सरासर हराम हों और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उन्हें बहुत ही घिनावना और लानत ज़दा ठहराया हो उसकी हिम्मत न तो कोई शरीफ़ आदमी कर सकता है और न यह इस्लाम में जायज़ है। इसलिए अक़लमन्दी का तक़ाज़ा है कि तीन तलाक़ की कभी नौबत ही न आए।

.ख़ुला, मुबारात और अलैहदगी

मियाँ-बीवी के बीच निबाह मुमकिन न होने की सूरत में अलैहदगी के लिए जिस तरह शरीअत ने मर्द को तलाक़ का हक़ दिया है, उसी तरह औरत को .ख़ुला का हक़ दिया है। तलाक़ और .ख़ुला में फ़र्क़ यह है कि तलाक़ की सूरत में शौहर को हक़ नहीं कि वह बीवी को दिए गए महर को वापस ले, लेकिन अगर औरत शौहर से .ख़ुला चाहे तो उसे महर वापस करना होगा। क़ुरआन में है,

''अगर तुम्हें यह .ख़ौफ़ हो कि वे दोनों अल्लाह की हदों पर क़ायम न रहेंगे तो उन दोनों के बीच यह मामला हो जाने में कोई हरज नहीं कि औरत अपने शौहर को कुछ दे-दिलाकर अलैहदगी हासिल कर ले।''

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-229)

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

.ख़ुला में बीवी और शौहर दोनों की रज़ामन्दी ज़रूरी है। बीवी महर माफ़ कर दे, या उसे पा चुकी हो तो वापस कर दे, या अलग से कुछ माल शौहर को देकर उसे .ख़ुला पर राज़ी कर ले तो .ख़ुला हो जाएगा और तलाक़े-बाइन हो जाएगी। बाद में अगर दोनों फिर साथ रहना चाहें तो उनका दोबारा निकाह हो सकता है।

.ख़ुला ही की एक शकल 'मुबारात' है। इसमें शौहर और बीवी में अलैहदगी इस तौर पर होती है कि शौहर बीवी से कहता है कि मैंने तुझे निकाह से अलग कर दिया, इस शर्त पर कि तू मुझे तमाम हक़ों से छुटकारा दे दे। इस पर बीवी कहती है कि मैंने तुझे बरी कर दिया।

अगर औरत के कहने पर शौहर .ख़ुला के लिए राज़ी न हो तो औरत को हक़ हासिल है कि वह दारुलक़ज़ा (इस्लामी अदालत) में दावा करके क़ाज़ी के ज़रिए निकाह को .ख़त्म करा दे। इसे 'तफ़रीक़' कहते हैं।

तफ़वीज़े-तलाक़ (तलाक़ का लागू करना)

शरीअत ने तलाक़ का हक़ मर्द को दिया है, इसलिए कि वही निकाह के .ख़र्चे बरदाश्त करता, औरत को महर देता और उसके भरण-पोषण की ज़िम्मेदारी लेता है। लेकिन अगर वह अपना यह इख़्तियार बीवी को दे दे, मिसाल के तौर पर कहे कि मैं तुम को तलाक़ ले लेने का इख़्तियार देता हूँ, तो बीवी को यह इख़्तियार हासिल हो जाएगा। वह जब चाहे तलाक़ लेकर अलग हो सकती है। इसे 'तफ़वीज़े-तलाक़' कहते हैं।

तफ़वीज़े-तलाक़ का हक़ बीवी के अलावा किसी और को भी दिया जा सकता है। मिसाल के तौर पर शौहर किसी शख़्स को इस बात का इख़्तियार दे कि वह जब चाहे उसकी बीवी को तलाक़ दे दे। लेकिन तफ़वीज़े-तलाक़ की वजह से शौहर का हक़े-तलाक़ .ख़त्म नहीं होता।

इद्दत की सूरतें और अहकाम

इद्दत के लफ़्ज़ी मानी गिनने या शुमार करने के हैं। इससे मुराद वह मुद्दत है जो निकाह .ख़त्म होने के बाद शरीअत ने मुक़र्रर की है। इस

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

मुद्दत में औरत दूसरा निकाह नहीं कर सकती। इद्दत की तीन सूरतें हैं।

(1) उसकी इद्दत तीन हैज़ है। (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-228) यह हुक्म उन औरतों के लिए है जिनको हैज़ आता हो। जिन औरतों को नाबालिग़ होने की वजह से हैज़ न आया हो, या किसी मर्ज़ या बुढ़ापे की वजह से हैज़ आना बन्द हो गया हो, उनकी इद्दत क़ुरआन ने तीन माह बयान की है। (क़ुरआन, सूरा- तलाक़ आयत-4)

(2) जिस औरत के शौहर का इन्तिक़ाल हो गया हो उसकी इद्दत चार माह दस दिन है। (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-234) दोनों सूरतें उन औरतों के सिलसिले में हैं जिनको तलाक़ या शौहर की मौत के वक़्त हमल (गर्भ से) न हो।

(3) तलाक़ पाई हुई या बेवा, जो हामिला हो उसकी इद्दत बच्चे की पैदाइश तक है। चाहे यह शौहर के मरने के फ़ौरन बाद हो जाए या चार माह दस दिन से ज़्यादा वक़्त लगे, बहर हाल बच्चा पैदा होते ही उसकी इद्दत पूरी हो जाएगी।

इद्दत का बुनियादी मक़सद यह है कि मालूम हो जाए कि औरत को शौहर से हमल नहीं है। इद्दत के दौरान औरत को बिना किसी सख़्त ज़रूरत के घर से बाहर नहीं निकलना चाहिए। इसी तरह न उसे बनाव सिंगार करना चाहिए, न शोख और भड़कीले कपड़े पहनने चाहिएँ। इस मुद्दत में किसी शख़्स के लिए उस औरत को साफ़ तौर पर निकाह का पैग़ाम देना जायज़ नहीं, अलबत्ता इशारे-किनाये में पैग़ामे-निकाह दिया जा सकता है। बनाव-सिंगार न करने का हुक्म तलाक़े-बाइन, तलाक़े-मुग़ल्लज़ और शौहर की मौत की सूरत में है। अलबत्ता अगर औरत को तलाक़े-रजई दी गई है तो वह इद्दत के दौरान बनाव-सिंगार कर सकती है।

तलाक़ पाई हुई औरत की कफ़ालत कैसे हो?

इद्दत के दौरान औरत, चाहे वह तलाक़ पाई हुई हो या बेवा, शौहर के घर में ही रहेगी और भरण-पोषण की मुस्तहिक़ होगी। इद्दत पूरी होने के बाद उसकी कफ़ालत की ज़िम्मेदारी उसके क़रीबी रिश्तेदारों पर होगी।

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

कुछ लोग तलाक़ के नतीजे में औरत के बेसहारा हो जाने की दुहाई देते हैं। वे कहते हैं कि औरत ने एक वक़्त शौहर के साथ गुज़ारा। अब शौहर ने तलाक़ देकर उसे अपने घर से निकाल दिया तो वह कहाँ जाए? और अपनी बाक़ी ज़िन्दगी कैसे गुज़ारे? ये लोग चाहते हैं कि शौहर को पाबन्द किया जाए कि वह तलाक़ पाई हुई बीवी को ज़िन्दगी भर गुज़ारा भत्ता देता रहे, जिससे उसकी गुज़र औक़ात हो सके। हक़ीक़त में ये लोग इस्लाम के निज़ामे-नफ़क़ात (भरण-पोषण व्यवस्था) को जानते ही नहीं हैं।

क़ुरआन सूरा-2 बक़रा, आयत-241 में तलाक़ पाई हुई औरत के लिए 'मताअ' का हुक्म दिया गया है। अल्लाह का फ़रमान है -

''जिन औरतों को तलाक़ दे दी गई हो, उनके लिए दस्तूर के मुताबिक़ 'मताअ' है। यह हक़ है मुत्तक़ियों पर।''

अरबी भाषा में 'मताअ' थोड़े सामान को कहा जाता है, जिससे वक्ती तौर पर फ़ायदा उठाया जाए। क़ुरआन में इसको तय नहीं किया गया है, बल्कि इसे रिवाज और दस्तूर पर छोड़ दिया गया है और ईमानवालों को इस बात की तरफ़ तवज्जोह दिलाई गई है कि उनमें से कोई तलाक़ देकर औरत से अलग हो तो उसके साथ एहसान का मामला करे और उसे कुछ दे दिलाकर विदा करे।

इस्लाम ने तलाक़ पाई हुई औरत को बेसहारा नहीं छोड़ा है, बल्कि उसकी कफ़ालत का इन्तिज़ाम किया है। अगर उसका बाप ज़िन्दा हो तो उस पर उसकी कफ़ालत वाजिब है। वह ज़िन्दा न हो तो जो भी उसका क़रीबी रिश्तेदार होगा, मिसाल के तौर पर चचा या भाई वग़ैरा उस पर उसकी कफ़ालत वाजिब होगी। अगर औरत औलाद रखती है और औलाद बड़ी और मालदार है तो उसका नफ़क़ा (भरण-पोषण) औलाद पर वाजिब होगा। अगर औरत का कोई रिश्तेदार ज़िन्दा नहीं है तो मुस्लिम समाज की ज़िम्मेदारी है कि उसकी गुज़र औक़ात का इन्तिज़ाम करे। ऐसे हक़दारों की ज़कात, मुस्लिम तंज़ीमों के बैतुलमाल और औक़ाफ़ के ज़रिए तरजीही तौर पर मदद की जानी चाहिए।

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

निकाह मर्द और औरत के बीच ज़िन्दगी की रिफ़ाक़त (साथ निभाने) का एक बाइज़्ज़त मुआहिदा है और तलाक़ इस मुआहिदे से हाथ उठा लेने का ऐलान। निकाह के बाद औरत को शौहर की तरफ़ से जो नफ़क़ा (खाना-ख़र्चा) मिला करता था, ज़ाहिर है कि तलाक़ के बाद उस पर से उसका हक़ ख़त्म हो जाता है। इद्दत के बाद भी तलाक़ पाई हुई औरत का खाना-ख़र्चा पिछले शौहर से दिलवाया जाए तो यह उसके साथ नाइन्साफ़ी भी है और औरत की ग़ैरत के ख़िलाफ़ भी। फिर तो मर्द उसी में आफ़ियत समझेगा कि औरत को किसी भी सूरत में तलाक़ न दे, बल्कि उसे लटकाए रखे और उस पर ज़ुल्म व सितम करता रहे।

हक़े-हिज़ानत (परवरिश का हक़)

तलाक़ पाई हुई औरत के खाने-ख़र्चे का मसला किसी हद तक हिज़ानत यानी हक़े-परवरिश से भी हल होता है। उस औरत के अगर छोटे बच्चे हों तो वे उसकी परवरिश में रहेंगे। लड़का हो तो वह बाशुऊर होने, यानी सात-आठ साल तक और लड़की हो तो बालिग़ होने तक। इस मुद्दत में मर्द को अपने बच्चों की परवरिश का ख़र्च अदा करना होगा। साथ ही औरत की गुज़र-बसर का भी इन्तिज़ाम करना होगा। अलबत्ता उसकी हैसियत बीवी के ख़र्चे की न होगी, बल्कि परवरिश के मुआवज़े की होगी। वह पिछले शौहर से खाना-ख़र्चा हासिल करनेवाली न होगी, बल्कि अपनी मेहनत की उजरत या मुआवज़ा पाएगी।

औरत को हक़े-हिज़ानत उस वक़्त तक हासिल रहेगा, जब तक उसका दूसरा निकाह न हो जाए। उसके बाद बच्चों की परवरिश उसके दूसरे क़रीबी रिश्तेदारों (मिसाल के तौर पर नानी, दादी, बहन, ख़ाला वग़ैरा) के ज़िम्मे होगी।

इस्लाम का क़ानूने-विरासत

किसी शख़्स के इन्तिक़ाल के बाद उसकी मिल्कियत उसके वारिसों में पहुँच जाने को विरासत कहते हैं। क़ुरआन और हदीस में इसका ताकीदी

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

हुक्म है। और हर वारिस का हिस्सा तय कर दिया गया है। विरासत में मर्दों और औरतों दोनों का हिस्सा है और विरासत का माल, चाहे कम हो या बहुत ज़्यादा हर हाल में उसकी तक़सीम को लाज़िम ठहराया गया है। अल्लाह का फ़रमान है :

"मर्दों के लिए उस माल में से हिस्सा है जो माँ-बाप और क़रीबी रिश्तेदारों ने छोड़ा हो ओर औरतों के लिए भी उस माल में हिस्सा है जो माँ-बाप और क़रीबी रिश्तेदारों ने छोड़ा हो, चाहे थोड़ा हो या बहुत और यह हिस्सा (अल्लाह की तरफ़ से) मुक़र्रर है।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-7)

किसी शख़्स का इन्तिक़ाल हो जाए तो उसके तरके में से नीचे लिखे कामों पर ख़र्च किया जाएगाः

1- सबसे पहले उसके कफ़न-दफ़न पर ख़र्च किया जाएगा।

2- उसकी वसियत पूरी की जाएगी। बशर्ते कि वसीयत उसके एक तिहाई माल से ज़्यादा की न हो और किसी वारिस के हक़ में न हो।

3- अगर उस पर कुछ क़र्ज़ हो तो वह अदा किया जाएगा।

उसके बाद जो कुछ बचेगा वह वारिसों में तक़सीम होगा।

इस्लामी क़ानूने-विरासत की बुनियाद ग़रीबी और मोहताजी पर नहीं है कि मैयत के वारिसों में जो जितना ज़रूरतमन्द हो, विरासत में उसका उतना हिस्सा लगा दिया जाए, बल्कि उसकी बुनियाद रिश्तेदारी बल्कि क़रीबी रिश्तेदारी पर है। रिश्तेदार बहुत-से होते हैं, लेकिन शरीअत में सिर्फ़ क़रीबी रिश्तेदारों को विरासत का हक़दार ठहराया गया है।

विरासत की तक़सीम के मामले में मुस्लिम समाज में बहुत ज़्यादा ग़फ़लत, सुस्ती और लापरवाही पाई जाती है। किसी शख़्स के इन्तिक़ाल के बाद उसके वारिसों में उसकी जायदाद की तक़सीम बरसों अमल में नहीं आती या वह कुछ ही वारिसों के मुश्तरका इस्तेमाल में रहती है और दूसरे विरासत से महरूम रहते हैं, वफ़ात पानेवाले की बेवा और दूसरे बूढ़े वारिसों का हिस्सा नहीं निकाला जाता, खेती की जायदाद में लड़कियों को हिस्सा

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

नहीं दिया जाता, या वे इस डर से ख़ुद ही मना कर देती हैं कि फिर भाइयों से ताल्लुक़ बाक़ी न रहेगा और उनका मायके जाना बन्द हो जाएगा, जहेज़ को विरासत का बदल समझ लिया जाता है और यह बहाना बना लिया जाता है कि विरासत में मिलनेवाले हिस्से के बराबर लड़कियों को पहले ही जहेज़ की शक्ल में अदा कर दिया जाता है। ये तमाम तरीक़े ग़लत हैं। क़ुरआन में विरासत के एहकाम को अल्लाह की हदें कहा गया है और उनकी पामाली पर जहन्नम के अज़ाब की ख़बर सुनाई गई है। अल्लाह का फ़रमान है :

''और जो कोई अल्लाह और उसके रसूल की नाफ़रमानी करेगा और उसकी मुक़र्रर की हुई हदों से आगे बढ़ेगा, उसे अल्लाह आग में डालेगा, जिसमें वह हमेशा रहेगा और उसके लिए रुस्वा कर देनेवाला अज़ाब है।''

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-14)

विरासत के मामले में यह बात भी याद रखने की है कि इसका मसला किसी शख़्स की वफ़ात के बाद पैदा होता है। उसके लिए किसी शख़्स की ज़िन्दगी में उसके बेटों और बेटियों का उससे अपना हिस्सा माँगना शरई तौर पर जायज़ नहीं है। कोई शख़्स अपनी ज़िन्दगी में अपना माल और जायदाद अपनी ख़ुशी से तक़सीम कर सकता है, लेकिन यह विरासत की तक़सीम नहीं, बल्कि हिबा होगा, जो उसकी मर्ज़ी पर निर्भर होगा। आदमी अपनी ज़िन्दगी में अपने माल का मालिक है। वह उसे अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ ख़र्च कर सकता है। अलबत्ता अगर वह अपनी ज़िन्दगी में अपनी औलाद में उसे तक़सीम करना चाहे तो शरीअत की तालीम यह है कि वह उन सब में बराबर बराबर तक़सीम करे।

विरासत की बहुत-सी सूरतों में औरत का हिस्सा कम होने की वजह

विरासत की बहुत-सी सूरतों में औरत को मर्द से ज़्यादा मिलता है। मिसाल के तौर पर कोई शख़्स माँ-बाप और एक बेटी छोड़कर मर जाए तो

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

बेटी को आधा हिस्सा मिलेगा, जबकि माँ-बाप हर एक छटा हिस्सा पाएँगे। कुछ सूरतों में औरत और मर्द दोनों को बराबर मिलता है। मिसाल के तौर पर अगर वारिसों में से शौहर और एक बहन हो तो दोनों के बीच मीरास आधी-आधी बंटेगी। सिर्फ़ कुछ सूरतों में औरत का हिस्सा मर्द के हिस्से का आधा होता है, मिसाल के तौर पर अगर मरनेवाले की औलाद में लड़के-लड़कियाँ या भाई बहन हों। इनमें यह अन्तर लिंग के आधार पर नहीं है। अगर ऐसा होता तो बेटे के मुक़ाबले में बाप का और बेटी के मुक़ाबले में माँ का हिस्सा कम न होता। इस अन्तर की बुनियादी वजह इस्लामी सामाजिक व्यवस्था में मर्द और औरत की पोज़ीशन है। मर्द पर कमाने, घर का ख़र्च चलाने और मातहत लोगों की कफ़ालत (भरण-पोषण) की ज़िम्मेदारी डाली गई है, जबकि औरत को माली जिद्दोजुहद से अलग रखा गया है। बचपन में उसकी कफ़ालत की ज़िम्मेदारी बाप के ज़िम्मे है, जवानी में शादी के बाद शौहर के ज़िम्मे और बुढ़ापे में औलाद के ज़िम्मे। वह जितने माल की मालिक बनती है सब उसके पास महफ़ूज़ रहता है। दूसरों पर ख़र्च करना उसकी ज़िम्मेदारी नहीं। लेकिन मर्द जो कुछ माल हासिल करता है, उसे मातहत लोगों पर ख़र्च करना उसकी ज़िम्मेदारी है। इस बुनियाद पर यह बात न्याय पर आधारित है कि मर्द का हिस्सा औरत का दोगुना हो। अगर दोनों का हिस्सा बराबर कर दिया जाता तो यह मर्द के साथ ना इंसाफ़ी होती।

यही वजह है कि जिन सूरतों में मर्द की माली ज़िम्मेदारियाँ कम या ख़त्म हो जाती हैं उनमें मीरास की तक़सीम के मामले में औरत और मर्द के बीच अन्तर नहीं किया गया है। मिसाल के तौर पर मैयत की औलाद हो और उसके माँ-बाप भी हों तो मीरास में माँ और बाप हर एक का छटा हिस्सा मुक़र्रर किया गया है। इसलिए कि जिस शख़्स की औलाद भी औलादवाली हो उसकी माली ज़िम्मेदारियाँ बड़ी हद तक कम या बिलकुल ख़त्म हो जाती हैं। इसकी हैसियत आम तौर से अपने पोतों-पोतियों के सरपरस्त की होती है। लेकिन अगर मैयत की कोई औलाद न हो और

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

उसके बाप की औलाद हो (यानी मैयत के भाई-बहन) हों तो इस सूरत में उस (यानी मैयत के बाप) की माली ज़िम्मेदारी हो सकती है। इसी वजह से बाप का हिस्सा माँ से ज़्यादा रखा गया है। (माँ को एक तिहाई और बाप को दो तिहाई मिलता है)

यतीम पोतों-पोतियों की कफ़ालत कैसे हो?

इस्लाम के निज़ामे-विरासत पर जो एतिराज़ात किए गए हैं उनमें से एक अहम एतिराज़ यह है कि उसमें यतीम पोतों-पोतियों को महरूम रखा गया है। यह एतिराज़ करते हुए उनकी ग़ुरबत व मस्कनत और बेचारगी व लाचारी को इतना नुमायाँ किया जाता है कि ऐसा मालूम होता है कि अगर उन्हें विरासत के माल में से हिस्सा न दिया गया तो वे भूखों मर जाएँगे और उनके लिए ज़िन्दगी गुज़ारना मुमकिन नहीं रहेगा। उसके बाद इस्लामी शरीअत पर निशाना साधा जाता है और कहा जाता है कि इस्लामी क़ानून ज़ालिमाना है, उसमें कुछ हक़दारों के हक़ मारे गए हैं। इसलिए वह मौजूदा ज़माने का साथ देने की सलाहियत नहीं रखता।

ये हज़रात अस्ल में विरासत के इस्लामी क़ानून के ज़ाब्तों, हिकमतों और बारीकियों को जानते नहीं हैं। इसी तरह यतीम पोतों-पोतियों से उनकी हमदर्दियाँ सिर्फ़ दिखावा और धोखा हैं। जिन तरीक़ों से यतीम पोतों-पोतियों की ज़रूरत के वक़्त मदद की जा सकती है, उन पर तवज्जोह देने के बजाए ये हज़रात ऐसे तरीक़ों से उनकी मदद करना चाहते हैं, जो इस्लामी शरीअत से टकराते हैं।

पीछे बयान किया जा चुका है कि इस्लाम में विरासत की तक़सीम की बुनियाद ग़रीबी और मोहताजी पर नहीं, बल्कि क़रीबी से क़रीबी रिश्तेदारी पर है। क़रीब से क़रीब रिश्तेदार की मौजूदगी में दूर के रिश्तेदार महरूम होंगे। किसी शख़्स के बेटे-बेटियाँ भी हों और पोते-पोतियाँ भी तो चूँकि बेटे-बेटियाँ उसके क़रीबी रिश्तेदार हैं, इसलिए वे हक़दार होंगे, उनकी मौजूदगी में दूर के रिश्तेदारों को कुछ न मिलेगा, जिनमें पोते-पोतियाँ भी शामिल हैं।

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

विरासत का मसला असल में किसी शख़्स की ज़िन्दगी में नहीं, बल्कि उसके मरने के बाद उठता है। जब उसकी ज़िन्दगी में उसके एक बेटे का इन्तिक़ाल हो गया है और उस शख़्स की मौत के वक़्त वह मौजूद ही नहीं है तो उसका हिस्सा किस तरह लगाया जाएगा? और जब उसका कोई हिस्सा नहीं तो उसके बेटे किस तरह हक़दार होंगे?

लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि यतीम पोतों-पोतियों को इस्लामी शरीअत ने बेयारो-मददगार छोड़ दिया और उनकी कफ़ालत का कोई प्रबन्ध नहीं किया है। उनकी कफ़ालत निम्नलिखित तरीक़ों से मुमकिन है-

1- सूरा-2 बक़रा आयत-233 का एक टुकड़ा यह है कि ''वैसा ही वारिस पर भी है'' यानी अगर बच्चे का बाप नहीं है तो उसकी कफ़ालत की ज़िम्मेदारी उस शख़्स पर है जो उस बच्चे की मौत की सूरत में उसकी विरासत पाने का हक़ रखता है। इससे फ़ुक़हा (इस्लामी धर्मशास्त्रियों) ने यह दलील दी है कि यतीम पोतों-पोतियों की कफ़ालत की ज़िम्मेदारी उनके क़रीबी रिश्तेदारों पर है। दूसरे अलफ़ाज़ में उनके चचा अपने बाप के वारिस होंगे, वही अपने यतीम भतीजों-भतीजियों की कफ़ालत के भी ज़िम्मेदार होंगे।

2- इस्लामी शरीअत में वसीयत का क़ानून मौजूद है। विरासत की आयतों में बार-बार कहा गया है कि विरासत की तक़सीम वसीयत को लागू करने और क़र्ज़ अदा करने के बाद की जाएगी। (सूरा-4 निसा, आयत-11) यतीम पोतों-पोतियों के हक़ में वसीयत करके उनकी ज़रूरतें पूरी की जा सकती हैं। दादा को चाहिए कि अगर उसके किसी बेटे का इन्तिक़ाल उसकी ज़िन्दगी में हो जाए तो वह अपने पोतों-पोतियों के हक़ में ज़रूरत के मुताबिक़ अपने एक तिहाई माल तक की वसीयत कर दे, ताकि उसके मरने के बाद वे विरासत से महरूमी की वजह से बेसहारा न हो जाएँ।

3- क़ुरआन में वारिसों को एक हिदायत यह दी गई है कि जब विरासत का माल तक़सीम होने लगे तो उसमें से उन रिश्तेदारों को भी कुछ न कुछ दें जिन्हें शरई तौर पर हिस्सा न मिल रहा हो। (क़ुरआन, सूरा-4

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

निसा, आयत-8) इस आयत से रहनुमाई मिलती है कि वारिसों को उन रिश्तेदारों का ख़याल रखना चाहिए और ज़रूरत के मुताबिक़ उनकी माली मदद करनी चाहिए, जो विरासत में हिस्सा नहीं पाते।

4- क़ुरआन मजीद में रिश्तों को जोड़ने की ताकीद की गई और रिश्तों को काटने से रोका गया है। यतीम पोते-पोतियाँ भी रिश्तों में जुड़ने के हक़दार हैं। अगर उनके रिश्तेदार उनकी ख़बरगीरी करें और ज़रूरत के वक़्त उनकी माली मदद करें तो वे कभी मसायल का शिकार नहीं होंगे।

यह पहलू भी सामने रहना चाहिए कि इस्लाम के विरासत के निज़ाम पर एतिराज़ करने वाले विरासत से यतीम पोते की महरूमी के मसले को इस अन्दाज़ से उठाते हैं कि मालूम होता है, दादा हर हाल में मालदार और पोता हर हाल में ग़रीब, नादार और बेकस व बेसहारा होता है, हालाँकि ये दोनों बातें पूरे तौर पर सही नहीं। बहुत-से मौक़ों पर दादा ख़ुद ग़रीब और अपने बेटों के सहारे का मोहताज होता है और बहुत-से मौक़े ऐसे भी होते हैं जब पोते को किसी तरह के माली सहारे की ज़रूरत नहीं होती, इसलिए उसे अपने बाप से अच्छी ख़ासी जायदाद और माल मिलता है।

ले-पालक का मसला

मुसलमानों के ख़ानदानी क़ानूनों में एक मसला ले-पालक का भी है। इसका मतलब है किसी को बेटा बनाना। जिस शख़्स को बेटा बनाया जाता है उसे मुतबन्ना या ले-पालक कहते हैं। कोई शख़्स किसी लड़के या लड़की की परवरिश अपने ज़िम्मे ले, उसकी कफ़ालत करे और तालीम व तरबियत और निकाह का ख़र्च उठाए, इस्लाम इसे नेकी और अज्र का काम ठहराता हैं। फिर अगर कफ़ालत में आनेवाला लड़का या लड़की यतीम हो तो उसकी कफ़ालत पर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने और ज़्यादा अज्र व सवाब की ख़ुशख़बरी दी है। आप (सल्ल॰) ने एक बार अपनी दो उंगलियों की तरफ़ इशारा करते हुए फ़रमाया ''मैं और यतीम की कफ़ालत करनेवाला, दोनों जन्नत में इस तरह होंगे जैसे ये दो उँगलियाँ हैं।'' (बुख़ारी -5304) लेकिन साथ ही यह भी हक़ीक़त है कि इस्लाम नस्ब की हिफ़ाज़त पर बहुत

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

ज़ोर देता है। उसके नज़दीक दूसरे की औलाद को अपनी सगी औलाद की हैसियत देना और उसकी निस्बत अपनी तरफ़ करना किसी भी सूरत में जायज़ नहीं है। क़ुरआन मजीद में साफ़ तौर पर ऐसा करने से मना किया गया है। अल्लाह का फ़रमान हैः

''और न उसने तुम्हारे मुँह बोले बेटों को तुम्हारा सगा बेटा बना दिया है। ये तो वे बातें हैं जो तुम लोग अपने मुँह से निकाल देते हो, मगर अल्लाह वह बात कहता है जो हक़ीक़त पर आधारित हो और वही सही तरीक़े की तरफ़ रहनुमाई करता है। मुँह बोले बेटों को उनके बापों की निस्बत से पुकारो, यह अल्लाह के नज़दीक .ज्यादा मुंसिफ़ाना बात है।'' (क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयतें-4, 5)

ले-पालक को सगी औलाद का दर्जा दे दिया जाए तो उसका असर इस्लाम के दूसरे क़ानूनों पर पड़ता है। मिसाल के तौर पर शौहर और बीवी अगर बेऔलाद हों तो मीरास में उनका जो हिस्सा तय किया गया है, औलाद होने की सूरत में उनका हिस्सा उससे कम है। इसी तरह किसी शख़्स के बेऔलाद होने की सूरत में उसके कुछ रिश्तेदार विरासत में हिस्सा पाते हैं और उसके औलाद होने की सूरत में महरूम रहते हैं। मिसाल के तौर पर अगर बहन बे-औलाद हो तो भाई उसका वारिस होगा। इसका असर इस्लाम के क़ानूने-निकाह पर भी पड़ेगा और इसके नतीजे में ले-पालक के लिए भी वे हराम ठहरेंगे जिनसे निकाह सगी औलाद के लिए हराम था।

इन्हीं वजहों से जब भारत सरकार ने 1972 ई में ले-पालक बिल पेश किया और कोशिश की कि इसको मुसलमानों पर भी लागू किया जाए तो मुसलमानों ने इसकी मुख़ालिफ़त की और इस पर कड़ा विरोध किया।

मुस्लिम पर्सनल लॉ पर अमल ज़रूरी क्यों?

ईमानवालों से दीन की माँग यह है कि वे ज़िन्दगी के तमाम मामलों में अल्लाह और उसके रसूल की बे-चूँ-चरा इताअत और पैरवी करें। जिन कामों का उन्हें हुक्म दिया गया है, उनहें बजा लाएँ और जिन कामों से

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

रोका गया है उनसे रुक जाएँ। इस दायरे में ख़ानदानी ज़िन्दगी भी आती है। अल्लाह के एहकाम पर सुनने और इताअत करने का रवैया इख़्तियार करनेवालों को क़ुरआन कामयाब कहता है अल्लाह का फ़रमान है कि-

"ईमान लानेवालों का काम तो यह है कि जब वे अल्लाह और रसूल की तरफ़ बुलाए जाएँ, ताकि रसूल उनके मुक़द्दिमे का फ़ैसला करे तो वे कहें कि हमने सुना और इताअत की और ऐसे ही लोग कामयाबी हासिल करनेवाले हैं। (क़ुरआन, सूरा-24 नूर, आयत-51, 52)

ईमानवालों से इसका भी तक़ाज़ा है कि अगर उनके बीच किसी मामले में इख़्तिलाफ़ और झगड़ा पड़ जाए तो वे उसे अल्लाह और उसके रसूल की तालीमात, यानी क़ुरआन व सुन्नत की रौशनी में हल करने की कोशिश करें। अल्लाह का फ़रमान है-

"फिर अगर तुम्हारे बीच किसी मामले में झगड़ा पड़ जाए तो उसे अल्लाह और रसूल की तरफ़ फेर दो, अगर तुम वाक़ई अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखते हो।"

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-59)

अगर ईमानवाले अपने इख़्तिलाफ़ी मामलों में क़ुरआन व सुन्नत को फ़ैसला करनेवाला, बनाएँगे, बल्कि उन्हें अपने ख़ाहिशों के मुताबिक़ हल करने की कोशिश करेंगे, या इनसानों के बनाए हुए क़ानूनों से मदद लेंगे तो उनका ईमान मोतबर नहीं। जो लोग ईमान का दावा तो करते हैं, लेकिन अपने आपसी इख़्तिलाफ़ों को अल्लाह और उसके रसूल के अहकाम की रोशनी में हल करने के बजाए दूसरों की तरफ़ रुजूअ करते हैं और उनके फ़ैसलों को तसलीम करते हैं, क़ुरआन में उनकी सख़्त अलफ़ाज़ में मज़म्मत की गई है और उनके अमल को बाग़ियाना और ज़ालिमाना ठहराया गया है। (सूरा-5 मायदा, आयत-44, 45, 47) इसलिए मुसलमानों पर लाज़िम है कि वे मुस्लिम पर्सनल लॉ के तहत आनेवाले क़ानूनों पर अमल करें और आपसी झगड़ों की सूरत में उन्हें छोड़कर दूसरे क़ानूनों की तरफ़ रुजूअ न करें।

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

मौजूदा हालात की नज़ाकत और हमारी ज़िम्मेदारियाँ

मौजूदा हालात हिन्दुस्तानी मुसलमानों के लिए बहुत नाज़ुक हैं। एक तरफ़ देश की न्यायपालिका की तरफ़ से समय-समय पर शरीअत मुखालिफ़ फ़ैसले किए जाते हैं, दूसरी तरफ़ हुकूमत से समान नागरिक संहिता तैयार करने की माँग की जाती है और सरकार भी इस सिलसिले में अपना इरादा ज़ाहिर करती है, तीसरी तरफ़ फ़िरक़ा परस्त तंज़ीमें मुस्लिम औरतों की मज़लूमियत की दास्तानें घड़ कर मुस्लिम पर्सनल लॉ को .ख़त्म करने की माँग करती रहती हैं। एक तबक़ा नाम निहाद तरक़्क़ी पसन्द मुसलमानों का है, जो इस्लाम के .ख़ानदानी क़ानूनों में बदलाव और सुधार की बात करता है और निकाह, तलाक़ और विरासत के इस्लामी क़ानूनों की नए हालात में अपनी ताबीर व तशरीह की पुरज़ोर वकालत करता है। हालाँकि ये वे एहकाम हैं जिनका 'क़ियास' व 'इज्तिहाद' से ताल्लुक़ नहीं है, बल्कि वे क़ुरआन व सुन्नत पर आधारित हैं इनमें कोई तब्दीली नहीं की जा सकती।

इन नाज़ुक हालात में हमारी ज़िम्मेदारी है कि हम इस्लाम दुश्मन साज़िशों को नाकाम बनाने की भरपूर जिद्दोजुहद करें, ताकि हम ज़िन्दगी के तमाम मैदानों में और .ख़ास तौर से .ख़ानदानी ज़िन्दगी में इस्लामी तालीमात व अहकाम पर आसानी के साथ अमल कर सकें। इसके लिए हमें तीन काम करने होंगे :

पहला यह कि हम अपने और अपने समाज के सुधार के लिए भरपूर जिद्दो-जुहद करें। यह हक़ीक़त है कि मुस्लिम समाज का एक बड़ा हिस्सा इस्लाम की बुनियादी समाजी तालीमात से अनजान है। .ख़ानदान के लोग, बीवी, शौहर, औलाद, माँ-बाप और दूसरे रिश्तेदार सही तरीक़े से एक-दूसरे के हक़ अदा नहीं करते, जिसकी वजह से उनके बीच कड़ुवाहटें पैदा होती हैं और झगड़े सिर उभारने लगते हैं। ज़रूरत है कि हम ज़िन्दगी के सभी मामलों में इस्लामी तालीमात को जानें, अपने दिलों में उन पर अमल के लिए आमादगी पैदा करें, अल्लाह की नाफ़रमानी से बचें और दूसरे इनसानों के हक़ .ख़ुशदिली से अदा करें। इसके लिए मुनासिब है कि फ़ेमिली कौंसलिंग सैंटर्स क़ायम करके सही रहनुमाई उपलब्ध कराई जाए।

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

दूसरे यह कि हम यह तय कर लें कि अगर हमारे बीच घरेलू और दूसरे मामलों में झगड़े उभरेंगे तो हम उन्हें मुल्क की अदालतों में हरगिज़ नहीं ले जाएँगे, बल्कि दारुलक़ज़ा और शरई पंचायतों की तरफ़ पलटेंगे और वहाँ से अल्लाह और रसूल के बताए हुए अहकाम और तालीमात व हिदायत के मुताबिक़ जो फ़ैसले होंगे उन्हें ख़ुशी से क़बूल करेंगे। मुसलमानों के समझदार और ज़िम्मेदार लोगों की ज़िम्मेदारी है कि वे मुल्क के कोने-कोने में दारुल-क़ज़ा और शरई पंचायतें क़ायम करने की कोशिश करें।

तीसरे यह कि हम वतनी भाइयों को इस्लामी ख़ानदानी क़ानूनों की अहमियत और हिकमतों को बताएँ, ताकि उनकी ग़लतफ़हमियाँ दूर हों।

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

मुस्लिम पर्सनल लॉ के विषय पर पढ़ने के लिए कुछ किताबें

1- मुस्लिम पर्सनल लॉ का मसला : तआरुफ़ व तजज़िया, क़ाज़ी मुजाहिदुल-इस्लाम क़ासमी, ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड, नई दिल्ली

2- मजमूआए-क़वानीने-इस्लामी, तैयारकरदा ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड, नई दिल्ली

3- इस्लाम का निज़ामे-मीरास, मौलाना अतीक़ अहमद बस्तवी क़ासमी, ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड, नई दिल्ली

4- ख़्वातीन के माली हुक़ूक, मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रहमानी, ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड, नई दिल्ली

5- दस्तूरे-हिन्द और यूनिफ़ॉर्म सिविल कोड, मुहम्मद अब्दुर्रहीम क़ुरैशी, ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड, नई दिल्ली

6- हुक़ूक़ुज़्ज़ौजैन, मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2015 ई॰

7- इस्लाम के आइली क़वानीन, मौलाना सैयद अहमद उरूज क़ादरी, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2015 ई॰

8- मुसलमान औरत के हुक़ूक़ और उन पर एतिराज़ात का जायज़ा, मौलाना सैयद जलालुद्दीन उमरी, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली

9- क़ुरआन का निज़ामे-ख़ानदान, मौलाना सैयद जलालुद्दीन उमरी, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2016 ई॰

10- तअद्दुदे-अज़वाज- कब और किस लिए? मौलाना मुहम्मद इनायतुल्लाह सुब्हानी

11- तलाक़ क्यों और कैसे? डॉक्टर मुहम्मद फ़हीम अख़्तर नदवी

12- क़ुरआन मजीद की घरेलू तालीमात, मुहम्मद रज़ीउल-इस्लाम नदवी, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली

13- इस्लामी निज़ामे-विरासत में औरत का हिस्सा, मुहम्मद रज़ीउल-इस्लाम नदवी, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली

14- दारुल-क़ज़ा : ज़रूरत और अहमियत और करने का काम, मुहम्मद रज़ीउल-इस्लाम नदवी, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली

हिन्दी में किताबें

1- इस्लाम में औरत का स्थान और मुस्लिम पर्सनल लॉ, प्रोफ़ेसर उमर हयात ख़ाँ ग़ौरी, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली

2- बहुविवाह, मौलाना सैयद हामिद अली, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली

3- तलाक़, क्यों और कैसे? डॉक्टर फ़हीम अख़्तर नदवी, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com

पब्लिशर्स, नई दिल्ली
4- मीरास का बटवारा और उसके हक़दार, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली
5- करआन का .ख़ानदानी निज़ाम, मौलाना सैयद जलालुद्दीन उमरी, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली
6- मुस्लिम पर्सनल लॉ और समान सिविल कोड, जनाब शम्स पीरज़ादा, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली
7- मुस्लिम पर्सनल लॉ धार्मिक व सामुदायिक दृष्टिकोण से, मौलाना सदरुद्दीन इस्लाही, मरकज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, नई दिल्ली

किताबें अंग्रेज़ी में

1- Muslim Personal Law and Uniform Civil Code, Shams Peerzaada, MMI Pubishers New Delhi
2- Polygamy in Islamic Law, Gamal A. Badawi, MMI Publishers New Delhi
3- Divorce in Islamic Perspective, Dr Muhammad Faheem Akhtar Nadvi, MMI Pubishers New Delhi
4- Property Rights of Muslim Woman, Dr Muhammad Faheem Akhtar Nadwi, MMI Pubishers New Delhi
5- Muslim Personal Law (Papers and Proceedings of a seminar) Editors: F. R. Faridi, M. N. Siddiqi, MMI Pubishers New Delhi
6- An Introduction to the Islami Civil Code, Dr. Abdul Mughni, MMI Pubishers New Delhi
7- Family System in the Holy Quran, Ml. Sayyid Jalaluddin Umari, MMI Pubishers New Delhi
8- Rights of Muslim Women a Critique of the Objection, Ml. Sayyid Jalaluddin Umari, MMI Pubishers New Delhi

Name of the Book
Muslim Personal Law Masail Aur Ahkam
Pages : 40 Edition March 2017
Published by
Markazi Maktaba Islami Publishers
D-307,Dawat Nagar,Abul Fazl Enclave.Jamia Ngar,New Delhi-110025
Ph: 26981652,26984347 Fax : 26987858
Email : mmipublishers@gmail.com
Website : mmipublishers.net
Printed at D.P Printer & Binder,Okhla-1,New Delhi-20

PDF Created with deskPDF PDF Writer - Trial :: http://www.docudesk.com